शास्त्री जी सवेरे-सवेरे बाहर सोफे पर बैठे, चित्रशाला में बनायी गयी तसवीरें देख रहे थे। उन दिनों शास्त्री जी के घर में ही मुद्रणालय था। तसवीरें बनाने का काम बालकृष्णपन्त जोशी किया करते थे। वे खुद सरकारी मुद्रणालय की सेवा में थे।

सुबह-शाम यहाँ आकर वे चित्रशाला का काम देख लेते थे। हिसाब-किताब आदि रखने के लिए शालिग्राम था ही।

बालकृष्णपन्त के अनुरोध पर आठ सौ रुपये की नयी सामग्री मुद्रणालय के लिए खरीदी गयी थी। इसलिए तसवीरें अच्छी बनने लगी थीं। लेकिन खपत बहुत ही कम थी। जेब से दो-चार आने खर्च कर एकाध तसवीर खरीदने और उसे दीवार से टाँगकर दीवानखाने को सुशोभित करने की वृत्ति लोगों में थी ही नहीं।

शास्त्री जी ने कहा, ''तसवीरें तो अच्छी बनी हैं। पर लोगों की उदासीन वृत्ति का क्या इलाज है? दरअसल इस उदासीन वृत्ति ने ही पूरे देश का बंटाढार कर दिया है।''

इसी बीच वासुदेवराव जोशी वहाँ आ गये। उन्होंने कहा, ''पिछले दिनों श्रीमन्त औंधकर ने रामपंचायतन की तसवीर बनाने का सुझाव दिया था। आजमाने में क्या हर्ज है? देवी-देवताओं की तसवीरें लोग बड़े शौक से खरीदेंगे।''

शास्त्री जी ने तुच्छतापूर्वक कहा, ''जनता के मन में स्वदेशाभिमान जगाने के लिए हमने जान-बूझकर नाना फड़नीस, सवाई माधवराव आदि श्रेष्ठ इतिहास पुरुषों की तसवीरें बनवायीं, लेकिन लोगों में ऐसी तसवीरें खरीदने की रुचि नहीं। इसलिए अब बाजारू माल बनवाकर जनता के सामने रखना होगा। जनता को ऐसा माल ही पसन्द आता है। यही राय देना चाहते हो न?''

वासू काका चुप हो गये।

शालिग्राम ने कहा, ''अब आगे क्या किया जाय?''

शास्त्री जी ने कुछ ऊबकर जवाब दिया, ''ठीक है। रामपंचायतन की तसवीर का काम शुरू कर दो। लोगों के मन में स्वधर्म-प्रीति है यह भी कुछ कम नहीं।''

बालकृष्णपन्त और शालिग्राम अपनी दुकान समेटकर चले गये। उसके बाद वासुदेवराव जोशी ने धीरे से कहा, ''अब निबन्ध-माला के आगामी अंक की तैयारी

करनी होगी।''

आगे चलकर वासुदेव राव जोशी ही वासू काका जोशी के नाम से मशहूर हुए। उम्र में वे शास्त्री जी से तीन साल छोटे थे। मैट्रिक तक ही पढ़े थे। लेकिन इसकी वजह वे उनका कोई काम रुका नहीं था। क्योंकि वे खाते-पीते परिवार से थे। शास्त्री जी उनके श्रद्धा-स्थान थे और कुछ कर गुजरने की प्रेरणा से वे अभिभूत थे। उनकी इस प्रेरणा के उत्स शास्त्री जी ही थे।

वासुदेवराव के सवाल की वजह से शास्त्री जी के माथे पर शिकन आ गयी। ''वासुदेवराव, फिलहाल खींचा-तानी के जिस दौर से मैं गुजर रहा हूँ, यह तो तुम जानते ही हो। पिताजी के गुजर जाने के बाद सारा बोझ मेरे ही सिर पर आ पड़ा है। चित्रशाला तो है ही। काव्येतिहास संग्रह की ओर भी थोड़ा-बहुत ध्यान तो देना ही पड़ता है। और अब तो खासकर स्कूल की स्थापना का काम भी सिर चढ़कर बोलने लगेगा। इस प्रकार के कई झंझट पालने के बाद निबन्ध-माला के लिए क्या खाक लिख पाऊँगा!''

वासू काका ने कहा, ''आपकी दिक्कतों को मैं देख रहा हूँ। लेकिन पिछले दस-ग्यारह महीनों से लोग निबन्ध-माला के लिए तरस रहे हैं। बार-बार पूछताछ करते हैं।''

शास्त्री जी के विशाल माथे पर शिकन आ गयी और वे चिन्ताक्रान्त हो गये। लेकिन एकाएक हँसकर उन्होंने कहा, ''हाँ, यह बात तो सही है कि इस साल के प्रारम्भ से इसमें अनियमितता आयी है। तो इस अनियमितता को नियमित रूप से जारी रहने देंगे; और अगले साल के प्रारम्भ में ही इकसठवाँ अंक प्रकाशित करेंगे।''

दिक्कतों से पार पाने का शास्त्री जी का यह रास्ता वासू काका को जँचा नहीं। लेकिन शास्त्री जी का खब्तीपन उनके लिए नया नहीं था, इसलिए उन्हें चुप रहना पड़ा। इसी बीच शास्त्री जी ने कहा, ''फिलहाल बाकी सभी काम छोड़कर स्कूल के मामले को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। स्कूल के लिए बढ़िया-सी एकाध जगह हो तो देखिए। विश्रामबागवाड़ा में आग लग जाने के बाद से सरकारी स्कूल के मिजाज कुछ ठण्डे पड़ गये हैं, इसलिए उसी के टक्कर की कोई ऐतिहासिक, लम्बी-चौड़ी वास्तु हो तो पता करो।''

वासू काका ने पूछा, ''कुछ युवक पिछले दिनों आये थे। उनके बारे में क्या फैसला किया आपने?''

शास्त्री जी ने कहा, ''अरे भाई, उन युवकों का उत्साह तो पानी के बुलबुले-सा है, जो नयनमनोहर किन्तु क्षणजीवी होते हैं। उनमें से भागवत और करन्दीकर तो निकल ही गये हैं। वे तो कॉलेज शुरू करने के ही आग्रही हैं। वरना साथ न देने का इरादा वे बाकायदा व्यक्त कर चुके हैं।''

वासू काका ने कहा, ''ये लोग व्यवहार बिलकुल ही नहीं जानते।''

''ये लोग तो माँ के स्तन से ही दूध पीते हैं लेकिन तुरन्त बाप भी बनना चाहते हैं।''

वासू काका भीतर-ही-भीतर मुसकराये। फिर उन्होंने पूछा, ''लेकिन तिलक आगरकर के बारे में?''

''तिलक भी कॉलेज शुरू करने के ही हिमायती हैं। और मैंने सुना है कि वे बहुत ही जिद्दी और दुराग्रही हैं। इसलिए उनके बारे में भी कोई यकीन नहीं दिलाया जा सकता है। हाँ, आगरकर शायद आ जाएँ। अब जल्दी ही उनके परीक्षा परिणाम भी घोषित हो जाएँगे। उसके बाद तुम उनसे मिलकर बात पक्की कर लेना।''

वासू काका को शास्त्री जी का बयान हवा में लठ चलाने जैसा लगा। ''इन ग्रेज्युएट लोगों के बल पर ही तो आगे बढ़ने की सोच रहे थे। लेकिन उनका साथ यदि न मिले तो आगे बढ़ना बेकार है। वामनराव भावे अपने स्कूल का प्रबन्धन किसी को सौंपना चाहते हैं, तो क्यों न वैसा किया जाए। क्योंकि वह चाहे जैसी हालत में हो, लेकिन दुकान तो पहले से खुली हुई है न? फिर तो दिक्कत भी कम होगी।''

शास्त्री जी ने दृढ़ता से कहा, ''वह दुकान है, इसीलिए मुझे नहीं चाहिए। भावे की आँख पैसों पर होती है। और मेरी आँख नयी पीढ़ी के निर्माण पर।''

लेकिन स्कूल अपने कब्जे में आने के बावजूद वे अपनी मर्जी से ही उसे चलने देंगे। कल कोई साहब आते ही उसे स्कूल दिखाने बड़े ठाठ से लिवा लाएँगे लेकिन किसी भी हैटधारी के कदम मैं अपने स्कूल को नहीं लगने दूँगा।''

अन्ततः इस बहस को यहीं समाप्त कर देना वासू काका ने उचित समझा और वे अपने किसी दूसरे काम के लिए चले गये।

चित्रशाला द्वारा बनायी गयी रामपंचायतन की तसवीर बढ़िया बनी थी और उसकी बिक्री शुरू करते ही खरीददार उस पर टूट पड़े थे। दो-चार आने की जगह अठन्नी, रुपया देकर भी तसवीर प्राप्त करने के लिए वे तैयार थे। असली समस्या तो उतनी अधिक संख्या में उसकी सप्लाई की थी।

शास्त्री जी के घर में इसी के बारे में बातचीत चल रही थी, इतने में वासू काका वहाँ आ पहुँचे। उन्हें देखकर शास्त्री जी ने मजाक में कहा, ''भगवान श्री रामचन्द्र जी की महानता में आज हमें पूरा यकीन हो गया। कदम-कदम पर जो लोग हमारे धर्म को कोसते हैं, उनसे तो यह अन्धश्रद्धा कई गुना बेहतर है।''

वासू काका ने गर्दन हिलाकर स्वीकृति दी और कहा, ''उन दोनों से मिलकर आ रहा हूँ। आगरकर परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो सके। उन्होंने कहा है कि और एक साल फेलोशिप मिलेगी। इस सहूलियत का फायदा उठाकर वे एम. ए. की पढ़ाई पूर्ण करना चाहते हैं। उसके बाद अगले साल से स्कूल से जुड़ने का वादा उन्होंने किया है।''